अन्दाजे बयाँ में ही कविता है (संदर्भ अरुण कमल)

डॉ. विधि शर्मा,

एसोसिएट प्राफेसर,
अदिति महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय

अरुण कमल की कविताओं में शुरू से ही एक किस्म की परिपक्वता और प्रौढ़ता रही है जिसे सहज मन और जीवन में उतर कर आसानी से पढ़ा जा सकता है। *अपनी केवल धार* (1980) से लेकर *पुतली में संसार* (2004) तक अलग–अलग समय में लिखी गई कविताओं में अरुण कमल हर बार एक अलग मिज़ाज से संसार को प्रस्तुत करते हैं जिससे कविता के रूप और चरित्र में एक नवीनता आती जाती है। इसे हम मात्र विकास नहीं कह सकते। पर सही मायने में यह एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँचना है। यह क्रम हमेशा से चलता आया है जिसे हम तुलसीदास, निराला, नागार्जुन, मुक्तिबोध आदि सभी बड़े कवियों में पाते हैं। *नये इलाके में* संग्रह में जिस विस्तार और सब–कुछ को समाहित करने की बात कही गई है–'जितनी भी है दीप्ति भुवन में सब मेरी पुतली में कसती' ('जितनी भी है दीप्ति') वह यहाँ *पुतली में संसार* में आकर एक ठोस आधार पाती है।

पुतली में संसार–जैसा कि शीर्षक से ही स्पष्ट हो रहा है, यहाँ कवि पुतली में पूरे संसार को बसाने की बात उठाता है जहाँ साधारण जीवन की स्थितियाँ मानो एक फिल्म की तरह आँखों के सामने आने लगती हैं। संग्रह की यह पहली ही कविता एक केन्द्रीय सूत्र के रूप में सभी कविताओं में शामिल रहती है। कविता का आरंभ ही *महाभारत* के एक ख्यात प्रसंग से होता है। अरुण कमल की बहुत कम कविताएँ ऐसी हैं जहाँ वे मिथक अथवा किसी ऐतिहासिक पौराणिक घटना के माध्यम से अपनी बात कहें। *पुतली में संसार* कविता में कवि ने अपनी कविता की बुनावट के केन्द्र में *महाभारत* के एक प्रसंग को रखा है जहाँ अर्जुन की धनुष विद्या की परीक्षा हो रही है और वह अपना पूरा ध्यान मछली की आँख पर केन्द्रित किए हुए है। *महाभारत* से उठाई गई इस कथा को कवि आधुनिक सन्दर्भ देता है, उसके माध्यम से आधुनिक स्थितियों पर बातचीत करता है। नामवर सिंह का मानना है कि कभी–कभी कविता का मर्म उसकी किसी एक पंक्ति में या कभी–कभी तो किसी शब्द में ही निहित होता है। आलोचक उसे पकड़ पाता है या नहीं यह देखने की बात है। यहाँ इस कविता में भी पूरी कविता का मूल दो पंक्तियों में समाहित है और वे पंक्तियाँ कविता के अन्त में आती हैं :

मुझे तो देखना था बस आँख का गोला
और मैं इतना अधिक सब कुछ क्यों देख रहा हूँ
देव!

–पुतली में संसार

कविता की ये अन्तिम दो पंक्तियाँ मानो पूरी कविता को संचालित करती हैं। लेकिन ये दो पंक्तियाँ पूरी कविता की संश्लिष्टता में जुड़कर अपना सन्दर्भ पाती हैं जिसे सम्पूर्णता में पढ़ने की जरूरत है। कवि लेखक के सृजन–कर्म और सम्वेदना के 'एप्रोच' पर बातचीत करता है। कविता की नियमावली कवि को बन्धन में बाँधती है। समूची काव्यशास्त्रीय प्रणाली कविता की तराश–खराश की बात तो करती है लेकिन

सामान्य जन के दुःख–दर्द की बात को नहीं उठाती। इसी प्रकार शासन प्रणाली भी है जो अर्जुन और गुरुदेव की बातचीत के माध्यम से सामने आती है, जहाँ मछली की आँख की तरह उसका बस एक लक्ष्य है–अपना हित साधना। इसीलिए वह लेखक पर तरह–तरह के अंकुश लगाती है। लेकिन अरुण कमल उन कवियों में से हैं जो उस घेरे को तोड़ते हैं। वह अपनी सम्वेदना का विस्तार करते हैं और शासन–व्यवस्था को धता बताकर दुनिया के दुःख–दर्द में शामिल होते हैं। इसीलिए उन्हें केवल मछली की पुतली ही नहीं बल्कि और भी बहुत सी छायाएँ अपने इर्द–गिर्द मंडराती दिखती हैं :

और मुझे मछली की पुतली में घूमती
एक और छवि दिख रही है देव
मेरी पुतली पर इतनी छायाएँ
इतनी बरौनियों इतनी पलकों की अलग–अलग छायाँ

–पुतली में संसार

इस प्रकार कवि पुतली में पूरे संसार को देखता है और साथ ही आज के समय के दबावों की बात करते हुए अपनी सृजन–प्रक्रिया को भी पाठकों के समक्ष लाने का प्रयत्न करता है।

आधुनिक युग की यह महत्त्वपूर्ण देन है कि कवि केवल कविता लिखता ही नहीं बल्कि अपनी सृजन–प्रक्रिया की भी बात करता है। अपने सरोकारों से पाठक को परिचित कराता है ताकि वह कविता में प्रस्तुत संसार से पूरी तरह जुड़ सके, उससे तादात्म्य स्थापित कर सके। यह काम कवि अपने लेखों के माध्यम से भी करता है और अपनी कविताओं को भी आधार बनाता है। अज्ञेय ने भी अपने लेखों और कविताओं में जगह–जगह अपनी सृजन–प्रक्रिया को खोलकर बताने की कोशिश की है। नागार्जुन, निराला आदि सभी बड़े कवियों ने कहीं–न–कहीं इसका ज़िक्र जरूर किया है। अरुण कमल भी उसी परम्परा के कवि हैं। उन्होंने भी न केवल अपने लेखों (कविता और समय) के माध्यम से अपितु अपनी कविताओं में भी अपनी कविता के संसार से पाठक को परिचित कराने की चेष्टा की है। 'धार' और 'हासिल' कविता में उन्होंने पहले ही इस बात को स्वीकार किया है कि वे किसान, मजदूरों, उपेक्षितों को अपनी कविता का विषय बनाते हैं और उनके दर्द को वाणी देते हैं। भाषा के सन्दर्भ में भी वे इस बात को स्वीकार करना नहीं भूलते कि उनकी कविता की भाषा जनभाषा है। भाषा को बहुत अधिक सजाने–सँवारने में वे विश्वास नहीं रखते। 'पूँजी' कविता भी उनकी इन दो कविताओं का विस्तार लगती है। वह अपनी कविता की सृजन–प्रक्रिया पर बात करते हुए अपनी जमीन से जुड़ाव को बताते हैं। जिस परिवेश में रहकर कवि का जीवन बीता है उसी से जुड़कर उसकी कविता फूटती है। उसी के सौन्दर्य को वह उभारता है क्योकि वह उसके कतरे–कतरे से वाकिफ है।[3] कवि किसान जीवन से अपने सरोकारों को जोड़ते हुए कहता है कि उसके गीत तो मैदानों, खेतों, बाग–बगीचों से जुड़े हुए हैं क्योंकि यही उनका मूल स्रोत है। यही उनकी पूँजी है :

मैं तो मैदानों खेतों का रहनवार
थोड़े से बोल थे बगीचे बघारों के।[4]

–पूँजी

पहाड़ों, घाटियों, दर्रों, सागर आदि का सौन्दर्य अभिभूत कर सकता है, बाँध सकता है लेकिन सृजन का अंग नहीं बन सकता क्योंकि सौन्दर्य को कविता में बाँधने के लिए वहाँ के जन–जीवन से जुड़ाव जरूरी है। इस प्रकार अरुण कमल कविता में स्थानीयता की बात को उठाते हैं और अपनी कविता का भरा–पूरा संसार ही नहीं भाषा भी सामान्य जन के बीच में से उठाने की माँग करते है। तभी वे 'गीत' की नहीं बल्कि 'बोल' की बात करते हैं। अर्थात् 'गीत' में जो लयबद्धता होती है उसके लिए भाषा की नफासत की जरूरत है। वे इसका निषेध करते हुए 'बोल' की

बात करते हैं यानी जहाँ भाषा अधिक स्वच्छन्द होती है और उसमें किसी प्रकार की सजावट की जरूरत नहीं होती। वह आम बोलचाल की भाषा होती है जहाँ आंचलिक शब्द भी अपनी घुसपैठ कर सकते हैं। इस प्रकार कवि ने कविता में स्थानीय रंग को विशेष महत्त्व दिया है क्योंकि देश का एक बड़ा वर्ग ग्रामीण जीवन से जुड़ा है। इस प्रकार अरुण कमल कविता की सृजन–प्रक्रिया के साथ–साथ किसान–जीवन की सच्चाई को भी सामने लाने की कोशिश करते हैं। किसान की सबसे बड़ी पूँजी है उसके खेत, उसकी जमीन और इनसे जुड़ी हुई चीजें। यही उसका जीवन है। वह अपने स्थानीय रंग में इतना रंगा होता है कि सौन्दर्य की अन्य वस्तुएँ उसके आकर्षण का केन्द्र नहीं बनतीं। ऐसे में हमें फणीश्वरनाथ रेणु की 'तीसरी कसम' कहानी का 'हीरामन' याद हो आता है जिसकी दुनिया अपने घर और बैलों तक ही सीमित है। शहरी जीवन से वह कोसों दूर है। अपनी छोटी सी दुनिया तक सीमित रहने के कारण ही उसके चरित्रा में खासा भोलापन दिखाई देता है। अरुण कमल कविता में इस भोलेपन और मासूमियत को बनाए रखने के लिए ही मानो अपनी जमीन से जुड़ाव की बात करते हैं।

आज स्त्री–विमर्श इस कदर समकालीन साहित्य की धुरी बना हुआ है कि न केवल कविताएँ बल्कि कहानी, उपन्यास, लेख आदि सभी में स्त्रा की स्वतन्त्रता और उसकी 'पर्सनल आइडेंटिटी' की बात उठाई जा रही है। लेकिन स्त्री की अस्मिता की बात एक खास तबके तक ही सीमित है जिसे हम 'एलीट क्लास' या 'विशिष्ट वर्ग' कह सकते हैं। दलित, मजदूर, गरीब स्त्री इस बहस में कहीं पीछे छूट जाती है। ऐसे में अरुण कमल जब अपनी कविताओं में इस वर्ग की स्त्रियों के दुःख–दर्द में शामिल होते हैं तो यह सुखद लगता है। अरुण कमल के सभी काव्य–संकलनों में स्त्राी के मूक दर्द और उसकी वेदना को स्थान मिला है। यह स्त्री आम तौर पर ग्रामीण परिवेश की स्त्री है जो अभावों में जीवन काट रही है और उसके दुःख में सहभागिता करने वाला कोई उसके इर्द–गिर्द नहीं है।

अरुण कमल ने अपने पहले ही काव्य–संकलन *अपनी केवल धार* में ग्रामीण परिवेश से जुड़ी अभावग्रस्त स्त्रियों पर अनेक कवितायें लिखी हैं। चाहे डोल हाथ में लेकर सड़क किनारे नल से पानी लाने वाली गर्भवती भौजी हो ('धरती और भार') या अपनी क्षमता से अधिक काम करने के कारण अचानक मृत्यु का ग्रास बनने वाली कुबड़ी बुढ़िया ('ओह बेचारी कुबड़ी बुढ़िया'), शौहर से जुदा होने के बाद कपड़े सिलकर अपना और अपने बच्चों का पेट पालने वाली दरजिन ('दरजिन') हो या डेली पैसेंजर में सफर करने वाली कामकाजी महिला ('डेली पैसेंजर') सभी के दुःख–दर्द में कवि सहभागी है। ये औरतें क्रूर सामाजिक स्थितियों का शिकार हैं, फिर भी संघर्ष करती हुई नजर आती हैं। कवि यहाँ यह उम्मीद करता है कि समय के बदलाव के साथ स्थितियाँ बेहतर होंगी। अपनी इन्हीं कविताओं का सिलसिला आगे बढ़ाते हुए *पुतली में संसार* में स्त्राी के दर्द को कवि उतनी ही गहराई से उठाता है और स्त्राी को रूढ़िगत सामाजिक बंधनों से मुक्ति के लिए संघर्ष करते हुए दिखाता है। यह परिवर्तन की उम्मीद को बनाए रखने की पहल है।

संग्रह की 'स्वप्न' कविता इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। भारतीय पारिवारिक संरचना में स्त्राी की स्थिति हमेशा से कमजोर रही है। पुरुषप्रधान इस समाज में स्त्राी के अधिकारों को लेकर जो कानून बनाए भी जाते है उन्हें ठीक तरह से लागू नहीं किया जाता और वे फाइलों के ढेर के नीचे दबकर ही रह जाते हैं। इस तरह का एक कानून पिता की सम्पत्ति में बेटी के अधिकार को लेकर भी बना क्योंकि भारतीय समाज में बेटी को पराया धन माना जाता है और उसका विवाह करके ही मानो माँ–बाप उसके प्रति अपने सम्पूर्ण

उत्तरदायित्व से हाथ झाड़ लेते हैं। ऐसे में यदि विवाह के पश्चात् उसे किसी तरह का दुःख होता है या ससुराल में उसे उत्पीड़ित किया जाता है तो उसे अपने घर के लोगों का उतना सहारा नहीं मिलता। ऐसे में उसके लिए जीवन बहुत कठिन हो जाता है। सम्पत्ति पर अधिकार का कानून बना तो पर वह भी व्यवहार में पूर्ण रूप से नहीं लाया जा सका। कारण साफ था–पुरुष का वर्चस्व। शहर में तो फिर भी उसे कहीं–कहीं स्वीकृति मिली किन्तु गाँव में तो इसे पूरी तरह नकार दिया गया क्योंकि गाँव के लोग अभी भी अपनी रूढ़िग्रस्त, मान्यताओं, घिसे–पिटे विचारों से बाहर नहीं निकल पा रहे और यही कारण है कि गाँव में स्त्रियों को अधिक दबाया–कुचला जा रहा है।

यहाँ इस कविता में कवि ने एक ऐसी ही लड़की की दुःख भरी दास्तां सुनाई है जो ससुराल वालों के अत्याचार से तंग आकर बार–बार भागती है किन्तु अपने घर में भी उसे ज्यादा समय तक आसरा नहीं मिलता। उसे उस नरक में वापस लौटना पड़ता है जहाँ मार से तंग आकर वह घर छोड़ती है और वापस आकर भी मार खानी पड़ती है :

हर बार मार खा भागी
हर बार लौटकर मार खायी
जानती थी वो कहीं कोई रास्ता नहीं है
कहीं कोई अन्तिम आसरा नहीं है।

–स्वप्न

यहाँ से कविता एक नया मोड़ लेती है क्योंकि वह दुःख–तकलीफों से तंग आकर जीवन के अन्त की बात नहीं सोचती। पास ही नदी है, रेल की पटरियाँ भी दूर नहीं लेकिन वह मरना नहीं चाहती। जिन स्थितियों में वह जी रही है वे उसके लिए मृत्यु के समान कष्टकारी हैं इसलिए वह भाग रही है, मृत्यु से जीवन को पाने के लिए, ऐसा जीवन जहाँ उसका भी अपना वजूद हो, जहाँ वह बेड़ियों से मुक्त हो सके :

लेकिन वह जीवन से मृत्यु नहीं
मृत्यु से जीवन के लिए भाग रही थी।

–स्वप्न

तरह–तरह के सामाजिक बन्धनों से जकड़ी हुई वह स्त्री लगातार प्रयत्न करती है उनसे छुटकारा पाने का। अपनी पूरी ताकत लगाती है लेकिन इन बन्धनों की जकड़ इतनी मजबूत है कि इनसे छुटकारा पाना सरल नहीं। पर वह हार नहीं मानती। हर रात एक ही सपना देखती है–वह है 'मुक्ति का सपना' ताकि यदि उसे मुक्ति न भी मिले तो भी वह इस आकांक्षा को लगातार बनाए रखे और जिस आजादी का स्वप्न उसने देखा है वह स्वप्न उसकी आँखों में सदा सजीव रहे। जब वह स्वप्न और आकांक्षा बरकरार रहेगी तभी एक दिन ऐसा आएगा जब यह सच हो सकेगा क्योंकि सपने उन्हीं के पूरे होते हैं जो सपने देखते हैं। इस प्रकार कवि अन्त में उम्मीद की लौ को जलाए रखने और मुक्ति के लिए संघर्ष करने की बात कहता है :

बार–बार हर रात एक ही सपना देखती
ताकि भूल न जाए मुक्ति की इच्छा
मुक्ति न भी मिले तो बना रहे मुक्ति का स्वप्न
बदले न भी जीवन तो जीवित बचे बदलने का यत्न।

–स्वप्न

कवि ने स्त्री की स्थिति को जीवन्त करने के लिए 'खूँटे से बँधी बछिया' का जो बिम्ब प्रस्तुत किया है वह बहुत जीवन्त बन पड़ा है। अरुण कमल के बिम्ब आंचलिक परिवेश से उठकर आते हैं। खूँटे से बँधी बछिया का अपने को मुक्त करने का प्रयास सीधे उस स्त्री की ओर संकेत करता है जो बन्धनों से मुक्ति के लिए प्रयत्नरत है :

खूँटे से बँधी बछिया–सी जहाँ तक रस्सी जाती, भागती
गर्दन ऐंठने तक खूँटे को डिगाती।

–स्वप्न

अरुण कमल के इस संग्रह में दुःख, विषाद और पीड़ा का चित्रण अनेक कविताओं में बिखरा हुआ है किन्तु उम्मीद की डोर को थामने की बात भी, कम ही सही, पर उठती है। अपने पहले संग्रहों के मुकाबले यहाँ आशा और विश्वास का स्वर कुछ धीमा पड़ा है जो युगीन परिस्थितियों की देन है। पर साथ ही 'संघर्ष' की बात कवि उठाता है जिसके माध्यम से उम्मीद की फिसलती डोर सँभलने लगती है। कुछ इसी मनोभाव की अभिव्यक्ति 'वापस' कविता में मिलती है जहाँ ग्रामीण स्त्री का मूक दर्द तो स्थान पाता ही है साथ ही उसके माध्यम से सामान्य मनुष्य को एक आशा का संकेत भी कवि देता है। जीवन में ऐसी बहुत सी स्थितियाँ आती हैं जब मनुष्य हार जाता है, थक जाता है। यह उसकी परीक्षा होती है। ऐसे में उसे निराशा और हताशा से उबरते हुए फिर से एक नई शुरुआत करनी चाहिए, क्योंकि स्थितियाँ और समय सदा एक से नहीं रहते। जो मनुष्य संघर्ष करने के लिए तत्पर है उसे कठिन समय से बाहर निकलकर फिर से अपने लक्ष्य की ओर उन्मुख होना चाहिए। थक–हारकर बैठ जाने, रोने–गाने में समय बिता देने में मनुष्य जीवन की सार्थकता नहीं है। इस बात को स्पष्ट करने के लिए कवि ने सामान्य जीवन से उदाहरण उठाकर स्थिति को मूर्तमान कर दिया है। जैसे नई वधू एक नए परिवार में आती है जो अभी तक उसके लिए अजनबी है। ऐसे में उसका भाई जब उससे मिलकर वापस जाने लगता है तो यह स्थिति उसके लिए बहुत कष्टकर होती है। उसे ऐसा लगता है मानों उसे अनजान लोगों के बीच अकेला छोड़ा जा रहा है। ऐसे में उसे अपने घर के लोगों की याद और अधिक सताने लगती है। लेकिन इस स्थिति का कोई विकल्प नहीं है। उसे पता है कि उसे ससुराल में रहना है। अतः वह भी थोड़ी देर रो–धोकर हाथ–मुँह धो अपने को संयत कर लेती है और स्वयं को काम में लगा लेती है ताकि स्थिति से उबर सके :

जैसे रो–धोकर चुप हो हाथ मुँह धो
वापस चूल्हे के पास लौटती है नई वधू
भाई के जाने के बाद।

–वापस

नई वधू के चित्रण के माध्यम से भारतीय गाँव के परिवार में स्त्री की स्थिति साफ उभरकर आती है जहाँ उसके निर्णय कोई मायने नहीं रखते। वह बस स्थिति पर आँसू बहा सकती है और वह भी कितनी देर? क्योंकि उन आँसूओं की वहाँ कोई कीमत नहीं है। उसके पास समझौता करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं होता।

नई वधू का दुःख से उबरना उसका वापस जीवन की ओर लौटना है। यही अपेक्षा समाज में रह रहे हर मनुष्य से कवि करता है कि जीवन की विषम परिस्थितियों में धैर्य धारण करते हुए फिर से एक नई पहल करनी चाहिए। यही मनुष्य जीवन का मूल मन्त्र है। 'सांझ' होने और 'बत्ती' जलाने के माध्यम से कवि अन्धकार, दुःख, निराशा से बाहर निकलकर प्रकाश और आशा की ओर बढ़ने की बात कहता है। जब आशा का संचार होगा तभी वह नई शुरुआत कर सकेगा :

बत्ती जलाओ और शुरू करो फिर वही पाठ
वहीं जहाँ छोड़ा था कल।

–वापस

अरुण कमल ग्रामीण जीवन से गहराई से जुड़े रहे हैं और उनके मूक दर्द को अपनी कविताओं में उभारते रहे हैं। यहाँ जिस वधू का चित्रण है वह गाँव की वधू है। अतः उसका बिम्ब खींचते हुए कवि ग्रामीण जीवन के महत्त्वपूर्ण अंग 'चूल्हा' की बात करना नहीं भूलता।

संघर्षशील स्त्री के चित्रण के साथ–साथ कवि अपनी कविताओं मे स्त्री के प्रति प्रेम और आभार की अभिव्यक्ति करता है। 'अनुभव' कविता में कवि अपने जीवन की सार्थकता को स्त्री के साथ जोड़कर देखता है और मानो समाज कोयह बताना चाहता है कि पुरुष का अस्तित्व, उसका

वजूद, स्त्री के बिना कितना अधूरा है। इस प्रकार यहाँ अरुण कमल स्त्राी को समाज में एक ऊँचा स्थान देते हैं :

और तुम इतना आहिस्ते मुझे बाँधती हो
जैसे तुम कोई इस्तिरी हो और मैं भीगी सलवटों
भरी कमीज।

—अनुभव

जीवन की उलझनों को सुलझाने में स्त्राी की इस सहभागिता का बहुत सुन्दर चित्र कवि ने खींचा है।

राजनीति आज के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। कविता भी अपने समय की राजनीति से कहीं—न—कहीं गहरे जुड़ी होती है क्योंकि वह अपने युग का सच होती है। आज की समकालीन कविता में राजनीति का साक्षात्कार अनिवार्य—सा हो गया है। राजनीति के तीव्र और आक्रामक दबाव के कारण कविता उससे बचकर नहीं निकल सकती। अरुण कमल अपने समसामयिक परिवेश के प्रति अत्यधिक जागरूक हैं। अतः उनकी कविताओं में राजनीतिक टकराव की झलक मिलती है। किन्तु इनमें किसी तरह की नारेबाजी नहीं है और न ही ये कविताएँ अखबारी हैं। ये तो अपने युग के सच को खोलकर सामने रख देने वाली कविताएँ हैं। उनकी कविताओं में व्यक्त राजनीति पूँजीवादी राजनीति के खिलाफ मेहनतकश जनता की राजनीति है। अपने पिछले तीन संग्रहों की भांति यहाँ भी कवि भ्रष्ट राजनीति—तन्त्र के नीचे दबे—कुचले मनुष्य की बात कहता है। 'बिछावन' कविता शासक वर्ग की तानाशाही की ही कथा सुनाती है। चाहे आजादी से पूर्व वाइसराय का शासन हो अथवा आज आजादी के बाद के मन्त्री जी का, स्थितियों में कोई खास परिवर्तन नहीं आया। जनता का शोषण तब भी जोर—शोर से हो रहा था। टॉर्चर चैम्बर, काल कोठरियाँ और मौत का कुआँ इसके प्रमाण हैं। लेकिन आज आजादी के इतने वर्षों बाद भी शोषण का तन्त्र जारी है। भले ही टॉर्चर—चैम्बर न हों लेकिन जनता को दबाया—कुचला जा रहा है। पहले भी शासक जनता के हित या सुख के बारे में न सोचकर अपने ऐशो—आराम के बारे में सोचता था और आज भी स्थिति वही है, बल्कि उससे भी भयावह। मन्त्रीजी के बेड का वाइसराय के बिछावन से भी अधिक कीमती और गुदगुदा होना इस बात का प्रमाण है :

तुमसे कहीं ज्यादा कीमती, कहीं ज्यादा गुदगुदा है
अपने मन्त्री जी का बेड
अब हम गुलाम नहीं।

—बछावन

कवि मानो पूरे व्यंग्य को अन्त में पाठकों के सामने ला देता है जहाँ वह कहना चाहता है कि गुलाम नहीं बल्कि गुलाम से भी बदतर। 'राजकीय सम्मान' कविता में कवि ने राजनीति से जुड़े लोगों को व्यंग्य का निशाना बनाया है। पूरे राजकीय सम्मान के साथ जिस व्यक्ति का अन्तिम संस्कार हो रहा है वह जरूर राजनीति से जुड़ा व्यक्ति है। तत्कालीन राजनीति ने प्रशासनिक प्रणाली को भी कितना लचर बना दिया है। इसे कवि ने व्यंग्य के माध्यम से सहज ही अभिव्यक्त कर दिया है। तभी तो इक्कीस के स्थान पर केवल बारह सिपाही ही जुटाए जा सके और जो बारह थे उनमें भी कुछ चुस्त तो कुछ ढीली पैंट में। उनके सलामी देने का ढंग देखिए :

कप्तान ने चौड़ा मुँह खोल कुछ हो हा किया
और दस बन्दूकें छूटीं
दो की गोली ही फँस गई
और एक की नली तो इतना नीचे थी
कि लगा गोली शव को लगेगी
पर वह बाल—बाल बच गया।

—राजकीय सम्मान

अरुण कमल ने जनता की गरीबी और खस्ताहाली के लिए शासन—व्यवस्था को दोषी ठहराया है और

यह ठीक भी है क्योंकि शासक जनता के प्रति उत्तरदायी है। 'वहां के चोर' कविता इसी सच्चाई को पूरी बेबाकी से सामने रखती है। अरुण कमल की यह कविता समकालीन कवियों की चुनिन्दा कविताओं में स्थान पाने की अधिकारी है। इसके कथ्य में निहित गम्भीरता पाठक को स्तब्ध कर देती है। भारत जैसे गरीब देश में चोरी की घटनाएँ बहुत आम हैं। कारण है भारत की आर्थिक संरचना। यह पूँजीवादी व्यवस्था की ही देन है कि अमीर और अधिक अमीर होता जा रहा है और गरीब और भी गरीब। देश की बहुत बड़ी जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे जीवन बिता रही है। दो वर्गों के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है। जब तक यह सिलसिला जारी रहेगा, जब तक वर्ग–वैषम्य कम नहीं होगा, तब तक लूट–पाट, चोरी–चकारी की वारदातें जारी रहेंगी। जो देश जितना गरीब होगा वहाँ यह समस्या उतनी ही अधिक होगी।

'वहाँ के चोर' कविता में कवि ने बिहार प्रदेश की गरीबी, भुखमरी और जलालत को सीधे उपस्थित कर दिया है। बिहार की शासन–व्यवस्था ऐसी लचर है कि वहाँ चोरी की घटना बहुत आम है लेकिन इस कदर गरीबी है कि चोर के हाथ भी क्या लगता है? गरीब लोगों की छोटी–मोटी चीजें छीनने वाले ये चोर क्या वास्तव में चोर हैं? यह सोचने की बात है :

और चूँकि सारे मुसाफिर बिना टिकट
गरीब गुरबा मजदूर जैसे लोग ही होते हैं
इसलिए डकैत किसी से अँगोछा चुनौटी खैनी की
डिबिया छीनते झपटते ...[10]

–वहाँ के चोर

कभी किसी का अँगोछा तो किसी की खैनी की डिब्बी, कभी खेतों से चने का साग तो कभी चूड़ीहार की चूड़ियाँ चुरा लेने वाले ये लोग चोर और डकैतों की श्रेणी में आते हैं तो बड़े–बड़े घोटाले करने वालों और घूस खाने वालों को हम किस श्रेणी में रखेंगे जो देश की इस बुरी स्थिति के लिए जिम्मेदार हैं। छोटी–मोटी चोरियाँ करने वाले ये लोग शासन–व्यवस्था के शिकार हैं। यह बिहार का ही नहीं किसी भी प्रदेश या देश का सच हो सकता है। जहाँ इतनी गरीबी, बेरोजगारी और भुखमरी है तो इस तरह की छीना–झपटी मचना स्वाभाविक है। इसलिए महत्त्वपूर्ण है पहले इन समस्याओं से निपटना। कविता के अन्त में कवि चोरी की एक हैरतअंगेज घटना को प्रस्तुत करता है जहाँ चोर कुछ चुराने के लिए घर में घुसता है और जब कुछ हाथ नहीं आता तब बासी भात और साग खाकर ही भाग जाता है। कविता का यह अन्त एक तरफ जनता की अथाह गरीबी की कहानी कहता है जहाँ घर में एक भी ऐसी चीज़ नहीं जिसे चोरी किया जा सके। बस थोड़ा सा भात और साग है–वह भी बासी। इतना बताना उसकी जर्जर आर्थिक स्थिति को सामने लाने के लिए काफी है। दूसरी तरफ वह चोर है जो भुखमरी का शिकार जान पड़ता है क्योंकि कुछ न मिलने पर वह बासी खाने से ही अपना काम चलाता है और इसके लिए उसका खतरा मोल लेना इस बात की ओर संकेत करता है कि उसे लम्बे समय से भोजन तक नसीब नहीं हुआ :

कहते हैं एक चोर सेंध मार घर में घुसा
इधर–उधर टो–टा किया और जब कुछ न मिला
तब चुहानी में रक्खा बासी भात और साग खा
थाल वहीं छोड़ भाग गया–
वह तो पकड़ा ही जाता यदि दबा न ली होती
डकार।

–वहाँ के चोर

अन्तिम पंक्ति इस बात को साफ बताती है कि ये चोर तो पकड़े जाते हैं, सजा भी पाते हैं लेकिन जो वास्तव में चोर हैं वे छुट्टे घूमते रहते हैं।

अरुण कमल ने संग्रह की अनेक कविताओं में दलित, शोषित और उपेक्षित वर्ग के दर्द को, जो बरसों से पीड़ा झेलता आया है, वाणी दी है। साथ ही आज जब यह वर्ग सचेत हो रहा है तो मुख्यधारा से जुड़े समाज के प्रति उसकी

जो धारणा बन रही है उसको सामने रखा गया है। एक ऐसी ही कविता है–'पक्ष का कारण' जहाँ अरुण कमल ने उनकी न केवल पक्षधरता की है अपितु उनके भीतर की कड़वाहट और टीस को भी अभिव्यक्त किया है। सामन्ती वर्ग भीतर से जितना भ्रष्ट और व्यभिचारी होता है, उसके व्यक्तित्व की भीतरी तहों में जितनी गन्दगी होती है, उतना ही वह बाहरी स्वच्छता का हिमायती होता है मानो उसके भीतर की कलुषता केवल इस बाहरी सफाई से धुल जाएगी। उसके लिए 'जूते उतारकर' भीतर आने की हिमायत करना सभ्यता या संस्कृति से जुड़ी हुई बात अथवा स्वच्छता का प्रतीक हो सकता है, किन्तु जिस व्यक्ति ने शोषण के इस क्रूर तन्त्र को झेला है उसके लिए यह सामन्ती मनोवृत्ति के अवशेष ही हैं :

जूता उतारकर अन्दर आने को कहना
न सिर्फ असभ्यता की निशानी है बल्कि सामन्ती
मनोवृत्ति का अवशेष भी।[11]

–पक्ष का कारण

वह सामन्ती मूड ही था जिसके चलते निचले वर्ग और निचली जाति के लोगों को लगातार प्रताड़ित किया गया। आज भी गाँव के निचली जाति या वर्ण का व्यक्ति ऊँची जाति और सम्पन्न व्यक्ति के आँगन में बिना जूता उतारे प्रवेश नहीं पा सकता, यहाँ तक कि उसका आँगन तक पहुँचना भी बहुत कठिन है। इसीलिए आज जब समय बदल रहा है और लोगों में चेतना आ रही है तो ऐसे में उसके विद्रोह के अपने हथियार भी बन रहे है। तभी तो कवि कहता है : 'और इसीलिए बैठके में जूता पहने दनदनाते घुस जाना विद्रोही कार्रवाई'। पर अभी भी स्थितियाँ पूरी तरह बदली नहीं है। सामन्ती मनोवृत्ति के चन्द ये अवशेष लोगों को सताने का कोई मौका हाथ से नहीं जाने देना चाहते। उनका बस चले तो वह गरीब इनसान की इज्जत ही उतार लें :

और तो और उनका वश चले तो जांघिया भी
उतरवा लें
क्योंकि बाहर की गन्दगी केवल जूतों के जरिए
ही तो अन्दर नहीं आती।

–पक्ष का कारण

कविता के अन्त में कवि उपेक्षित वर्ग की जर्जर आर्थिक स्थिति को सामने लाता है जो उसे यथास्थिति का विरोध करने की प्रेरणा देती है। यह वर्ग इतना तंगहाल है कि उसके लिए बाहरी दिखावे कोई मायने नहीं रखते :

पर सच बात तो यह थी कि मैं जूता उतारने के
इसलिए खिलाफ था कि मेरा पैताबा
तार–तार था।

–पक्ष का कारण

अरुण कमल ने लम्बी कविताएँ कम ही लिखी हैं। आज छोटी कविताएँ लिखने का दौर है जहाँ कम–से–कम शब्द में अपनी बात को गम्भीरतापूर्वक कहा जा सके। *नये इलाके में* संग्रह में एक 'वृत्तान्त' कविता है जो लम्बी है और यहाँ इस संग्रह में 'घर–बाहर' नाम से एक लम्बी कविता है। इन लम्बी कविताओं को कवि टुकड़ों में बाँटकर प्रस्तुत करता है। 'वृत्तान्त' शीर्षक कविता को भी कवि ने आठ खंडों में बाँटा है और यहाँ 'घर–बाहर' कविता में तो कवि ने इस लम्बी कविता को ग्यारह छोटी–छोटी कविताओं में बाँट दिया है और उनको अलग–अलग शीर्षक में भी बाँधा है। यह कविता कवि के चीन और इंग्लैंड के यात्रा–प्रसंगों पर आधारित है। यात्रा को आधार बनाकर अरुण कमल पहले भी अनेक कविताएँ लिख चुके हैं पर यहाँ इन कविताओं का रूप यात्रा–संस्मरण के अधिक निकट है। मानो यात्रा के दौरान जो–जो अनुभव मानस पटल पर टँके रह गए उन्हें लेखक ने कविता में ढाल दिया है। इसी शृंखला की एक कविता है–'बुद्ध मन्दिर में'। भूमंडलीकरण के इस दौर में तेजी से बदलती दुनिया का चित्र तो *नये इलाके में* में ही सामने

आने लगा था। यहाँ कवि अर्थशास्त्र के मुद्दे को और अधिक गहराई से सामने लाता है जहाँ उदारीकरण की नीतियों और विश्वबाजार की बात तो होती ही है साथ ही डब्ल्यू.टी.ओ. और वर्ल्ड बैंक की नीतियों को भी व्यंग्य का निशाना बनाया है :

मेरे पास एक नया नोट है पाँच का
स्वीकार करोगे बुद्ध? रुपया चलेगा चीन में?
या केवल युवान?
डॉलर तो हरगिज नहीं बुद्ध को।[12]

–बुद्ध मन्दिर में

इसी श्रृंखला की अन्य कविताएँ–'चीन की दीवार', 'माओ विश्राम', 'भीख', 'शेक्सपियर का घर' आदि भी अपने प्रभाव में तीक्ष्ण हैं।

छोटे–छोटे अनुभवों को कविता में ढाल देने की कला में कवि सिद्धहस्त है। जीवन का कोई भी हिस्सा यहाँ कविता बन सकता है। कवि अक्सर इस तरह के वर्णन के लिए यात्रा का सहारा लेता है। 'हर आम और खास को' कविता में कवि ने यात्रा के दौरान लोगों की लापरवाही से होने वाली दुर्घटना की ओर इशारा किया है। चलती ट्रेन में खिड़की से बाहर कुछ फेंकना कितना खतरनाक हो सकता है यह कविता में प्रस्तुत घटना से सीधे सामने आता है। चलती हुई ट्रेन में पानी पीकर डाभ (कच्चा नारियल) बाहर फेंक देने पर वह जवान चौकीदार के सिर पर लगा और उसकी मौके पर ही मौत हो गई :

कि अचानक एक डाभ उसके माथे पर लगा
और 'ऐन मौके पर उसने दम तोड़ दिया' ऐसा
अगले दिन छपा।[13]

–हर आम और खास को

इस तरह से सामूहिकता में समकालीन कविता के भीतर अरुण कमल के अन्दाजे बयां को अलग से पहचाना जा सकता है।

सन्दर्भ

1. *पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 14।
2. *पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृश्ठ 13।
3. *कविता और समय,* अरुण कमल, पृश्ठ 212।
4. *पूंजी, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 15।
5. *स्वप्न, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 24।
6. *वापस, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 20।
7. *अनुभव, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 94।
8. *बिछावन, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 33।
9. *राजकीय सम्मान,* पुतली में संसार, अरुण कमल, पृष्ठ 32।
10. *उधर के चोर, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 29।
11. *पक्ष का कारण, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 32।
12. *बुद्ध मंदिर में, नये इलाके में,* अरुण कमल, पृष्ठ 48।
13. *हर आम और खास को, पुतली में संसार,* अरुण कमल, पृष्ठ 59।